15

तैयारी का काल

(मत्ती 3-4:11; मरकुस 1:1-13; लूका 2:40-4:13; यूहन्ना 1:19-28)

I. नासरत में खामोश वर्ष

तीस वर्ष तक यीशु नासरत में ही रहा। यहूदिया और यरूशलेम के सभ्य यहूदियों की नज़र में यह तुच्छ सा इलाका था; और जब अप्रसिद्धि में से यीशु अचानक उभरकर सामने आया, तो उसे और उसके चेलों को तिरस्कारपूर्ण ढंग से नासरी कहा जाने लगा।

1. सुसमाचार की पुस्तकों का अपना संयम। –उसके पालने के इर्द-गिर्द इकट्ठे होने, उसकी सेवकाई और क्रूस की घटना की सभ्यपत्ति के मुकाबले उसके ये तीस खामोश वर्ष हैं। परमेश्वर की प्रेरणा रहित लोग किसी की जीवनी ऐसे नहीं लिखते। उन्हें बचपन की घटनाओं, विकसित हो रही बुद्धि के चिह्नों और प्रतिज्ञा को आधार बनाकर लिखना अच्छा लगता है। सुसमाचार की अप्रमाणिक पुस्तकों (अपोक्रिफ़ा) के लेखकों ने यीशु के प्रारभ्भिक वर्षों के बारे में इसी सोच को आधार बनाकर लिखा। उन्होंने उसके सभ्मान में चमत्कारी और तुरन्त होने वाले आश्चर्यकर्मों से अपने पन्ने भर दिए, परन्तु वास्तव में ऐसा करके उन्होंने उसका अपमान किया। सुसमाचार की हमारी पुस्तकों का संयम उनकी कहानी की वास्तविकता और उन लेखकों को परमेश्वर की प्रेरणा होने का प्रमाण है।

2. शैक्षिक प्रभाव। –यीशु न तो आलस्य में और न ही अज्ञानता में बड़ा हुआ। वह एक बढ़ई था और लोगों में बढ़ई के पुत्र के रूप में प्रसिद्ध था (मत्ती 13:55; मरकुस 6:3)। हर यहूदी लड़का कुछ न कुछ काम अवश्य सीखता था। किसान भी पढ़-लिख सकते थे। उसके अनपढ़ होने (यूहन्ना 7:15) का अर्थ केवल यही है कि उसने रब्बी होने के लिए पाठशाला में विधिवत शिक्षा नहीं पाई थी; या हम यूं कह सकते हैं कि उसने कोई डिग्री नहीं पाई थी। ऐसा नहीं है कि वह इन तीन भाषाओं अर्थात अरामी, (जो कि उसकी मातृभाषा थी); इब्रानी (जो पवित्र शास्त्र की मूल भाषा थी) और यूनानी (जो उसके समय की साहित्यिक भाषा थी), से परिचित न हो। यद्यपि वह इतना निर्धन था कि वह पवित्र शास्त्र की सभ्पूर्ण प्रति मोल नहीं ले सकता था, परन्तु गांव के आराधनालय में जाकर वह इसे पढ़ सकता था; और इसके कुछ विशेष भाग तो अवश्य ही इस बढ़ई के घर में रखे होंगे।

3. उसका यरूशलेम जाना। –शिक्षा के एक महत्वपूर्ण माध्यम का उल्लेख किया गया है (लूका 2:46-51)। उसके माता-पिता हर साल फसह मनाने के लिए यरूशलेम जाते थे। ऐतिहासिक घटनाओं से भरे देश में से होकर वहां पहुंचने के लिए अस्सी मील की

दूरी तय करनी पड़ती थी। यरूशलेम के लोगों के लिए भी यह शहर दूसरी किसी भी राजधानी से अधिक प्रिय था। दूर-दूर के देशों के परदेशी, अलग-अलग भाषा बोलने वाले, उसकी गलियों में भरे रहते और इसके मन्दिर में उनकी भीड़ रहती थी। तीस वर्ष में केवल एक बार ही गुमनामी का पर्दा उठाया जाता है। किसी यहूदी लड़के के लिए बारह वर्ष जीवन का एक महत्वपूर्ण समय होता था। बारह वर्ष का लड़का व्यवसाय सीखने लगता था अर्थात उसे ''बड़ा हो गया'' कहा जाने लगता था; अब उसका पिता उसे बेच नहीं सकता था; वह तावीज़ (चिह्नानी; तु. व्यवस्था 6:8; 11:18) पहनने लगता और उसे ''व्यवस्था का पुत्र'' कहा जाता था। इस नाज़ुक उम्र में, लगता है कि यीशु पहली बार यरूशलेम में गया। उसके साथ के लोगों को वापसी में एक दिन के बाद पता चला कि यीशु गुम हो गया है। उसके माता-पिता यरूशलेम लौटकर उसे पूरा दिन ढूंढ़ते रहे। आखिर वह उन्हें, गली के लड़कों के साथ खेलते हुए या किसी को देखते हुए नहीं बल्कि मन्दिर में, व्यवस्था की बातें सिखाने वालों में, उनकी बातें सुनते और उनसे प्रश्न पूछते हुए मिला। ''तुम मुझे ज़्यों ढूंढ़ते हो? ज़्या नहीं जानते थे कि मुझे अपने पिता के भवन में होना आवश्यक है?''[1] उसके प्रारज़िभक लिखित शज़्द ऐसे ही हैं, और उनसे उसके जीवन की पूरी कहानी पता चल जाती है। वह नासरत में उनके साथ लौट तो गया और उनके अधीन भी रहा, परन्तु इसमें कोई संदेह नहीं कि कभी-कभी यरूशलेम में आना उसके स्वभाव को बनाने और उसकी योजनाओं को परिपज़्व करने के लिए एक महत्वपूर्ण प्रभाव डालने वाला था।

हम यह पूछे बिना नहीं रह सकते कि यीशु को अपने ईश्वरीय स्वभाव और व्यज़्तित्व की चेतना कब और कैसे मिली? ज़्या यह चेतना उस पर अचानक प्रकट हुई या सामान्य बच्चे की तरह धीरे-धीरे विकसित हुई? ज़्या यह चेतना उसके जन्म की अद्‌भुत बातें करते हुए शांत घर से निकली या उसके अन्दर से उत्पन्न हुई। ऐसे प्रश्न हमें गहराई तक ले जाकर हम पर बहुत सी बातें प्रकट करते हैं। परन्तु यह स्पष्ट है कि बारह वर्ष की आयु में उसे अच्छी तरह मालूम था कि परमेश्वर उसका पिता है।

4. खामोश वर्षों की शिक्षा। -सार्वजनिक रूप में यीशु अपने पिता के काम में केवल तीन वर्ष ही लगा रहा; जबकि सच्चाई यह है कि हज़ारों लोगों को सिखाने और हमारे पापों के लिए मरने के समय की तरह ही वह उन खामोश वर्षों में भी परमेश्वर का काम कर रहा था। यीशु के काम को उसके व्यज़्तित्व के अनुसार देखा जाता है; और तीस वर्ष में ''बुद्धि और डील डौल में और परमेश्वर और मनुष्यों के अनुग्रह में'' बढ़ते हुए ही वह इतना बड़ा हुआ था।[2] संसार की सबसे बड़ी आवश्यकता चरित्र है; और यीशु नासरी के गुमनामी के वर्षों से ऐसे चरित्र वाले व्यज़्ति के निकलने की तैयारी के वर्ष व्यर्थ नहीं हो सकते।

II. बपतिस्मा देने वाले की सेवकाई

1. भविष्यवाणी का फिर से बहाल होना। -सार्वजनिक रूप में अंतिम भविष्यवाणी की पुकार चार सदियां पहले सुनी गई थी। अंतिम इब्रानी भविष्यवज़्ता (मलाकी 4:5, 6) और यशायाह (40:3) ने मसीहा के एक अग्रदूत के विषय में पहले से बता दिया था।

यूहन्ना को, उसके जन्म की घोषणा और जन्म के समय ही, वह अग्रदूत नियुक्त कर दिया गया था। उसके जन्म और खतने के विस्तृत विवरण के बाद, एक ही आयत (लूका 1:80) में वे सब बातें मिल जाती हैं जिनसे उसके तीस वर्ष के बारे में पता चलता है। उसने जन्म से ही नासरी कहलाना था (लूका 1:15; तु. गिनती 6:1-5); और जंगल से निकलने के समय वह प्राचीन समय के इब्रानी भविष्यवक्ताओं की तरह था। उसका देर तक अकेला रहना नि:संदेह अनुशासित अवस्था में और समय के पापों पर और मसीहा और उसके राज्य की भविष्यवाणी के दर्शनों पर गहरा चिंतन था। उसने नगर नहीं ढूंढ़े, बल्कि जंगल में, यरदन नदी के पास बहुत कम आबादी वाले इलाके में प्रचार किया।

2. उसकी सेवकाई की सामर्थ। -दो साल की उसकी सेवकाई ने वह काम कर दिखाया जो अधिकतर सेवकाइयों से पचास साल में भी नहीं हो सकता था। उसने ''कोई आश्चर्यकर्म नहीं किया'' (यूहन्ना 10:41), परन्तु जल्द ही पूरा देश उसके आगे झुक गया। केवल गांव के देहाती लोग ही नहीं बल्कि सज़्य ग्रन्थी और राजधानी से आने वाले फरीसी भी इस दूसरे एलिय्याह से बातें सुनने के लिए उमड़ पड़े। लोगों को लगा कि आखिर वह आदमी आ गया है जिसने उनकी आत्माओं के लिए संदेश देना था। उसने अपने आप को उस समय के धार्मिक गुरुओं की तरह पुदीना, सौंफ और धनिया, तावीज़ों की चौड़ाई या सज़्त के दिन की यात्रा की लज़्बाई के प्रश्नों में व्यस्त नहीं किया। कौम को खालीपन से वास्तविकता की ओर बुलाना उसके मिशन का एक भाग था। उसने सिपाहियों की हिंसा, चुंगी लेने वालों की ज़बर्दस्ती, फरीसियों के कपट और सब लोगों के स्वार्थीपन की निंदा की (लूका 3:10-14)।

3. राज्य निकट होना। -यूहन्ना की सेवकाई यूं ही खत्म नहीं हुई। उसकी सेवकाई तो *तैयारी के लिए* थी। इस सेवकाई का मुज़्य बोझ था कि, ''मन फिराओ, ज़्योंकि स्वर्ग का राज्य निकट है।''[13] उसने मसीह होने से इन्कार किया, परन्तु अपने आप को तैयारी करने वाले की पुकार कहा (यूहन्ना 1:19-23)। अपने संदेश पर ज़ोर देने के लिए उसने ''मन फिराव'' तथा ''क्षमा के लिए'' बपतिस्मा दिया; और साथ ही लोगों को उस पर जो आने वाला था और जिसने पवित्र आत्मा से बपतिस्मा देना था, विश्वास करने के लिए कहा (मरकुस 1:7, 8; *तु.* प्रेरितों 19:4)। सो रही कौम को जगाने, इसके विवेक को झंझोड़ने, मसीहा की आशा की ज्योति को जलाने के लिए पहले इसे अपने तक रखो और फिर इसे दूसरों को दो, उसकी छोटी सी सेवकाई का लक्ष्य और परिणाम यही था।

4. यीशु का बपतिस्मा। -इसका चरम यीशु के बपतिस्मे के साथ हुआ। पापी लोगों की भीड़ में ही एक दिन मरियम का पाप रहित पुत्र आ गया। हम नहीं जानते कि उनकी मुलाकात पहले कभी हुई थी या नहीं लेकिन यह सत्य है कि यूहन्ना उसे मसीहा के रूप में नहीं जानता था (यूहन्ना 1:31-34)। परन्तु शेर जैसा नबी जो फरीसी और राजा का सामना कर सकता था, यीशु के निराले पौरुष के सामने दीन होकर झुक गया; ''मुझे तेरे हाथ से बपतिस्मा लेने की आवश्यकता है, और *तू मेरे पास* आया है?''[14] यीशु का बपतिस्मा सचमुच हमारे बपतिस्मे की तरह नहीं था ज़्योंकि न तो यह ''मन फिराव'' का और न

''पापों की क्षमा'' के लिए था। फिर भी यूहन्ना और यीशु दोनों के लिए इसका बहुत महत्व था। खुले हुए आकाश से उतरते हुए आत्मा अर्थात परमेश्वर के स्वर ने यूहन्ना से कहा, ''यह मेरा प्रिय पुत्र है,''[5] जिससे इस बात में कोई संदेह न रहा कि यही वह मसीहा था जिसके आगे उसका घटना आवश्यक था। हमारी तरह ही, यीशु के लिए भी बपतिस्मा जीवन में एक संकट का चिह्न था; आत्मा उतरा था और उसे परमेश्वर का पुत्र घोषित किया गया था। ''पानी में डूबने से पूर्व–उस पवित्र और शुद्ध के बाहर आते समय अवश्य ही उसके समर्थन में एक स्वर्गीय महिमा का प्रकाश हुआ होगा। उसके पिछले जीवन का अध्याय बंद होकर एक नया युग शुरू हो गया था। यह उसके लिए सचमुच एक नये जीवन में प्रवेश था। बीते वर्षों को यरदन के पानी में गाड़ दिया गया था। वह यीशु, अर्थात मनुष्य के पुत्र के रूप में नीचे जाकर परमेश्वर का मसीह बनकर बाहर निकला था।''[6]

5. परीक्षा। –अब यीशु अपनी महान सेवकाई की दहलीज पर है। तीस वर्षों में उसका मानवीय स्वभाव परमेश्वर के लिए काम आने के लिए परिपज़्व हो चुका है। ज़्या उसमें अंत तक दृढ़ता से लगे रहने का साहस होगा? यही वह सवाल था जिसका उज़र उसकी परीक्षा में मिलना था। इसका हल यहूदियों द्वारा एक आश्चर्यकर्म करने वाले, राजनैतिक मसीहा की अपेक्षा करने में देखा जाएगा। ज़्या परीक्षा करने वाला आमने–सामने आया; या उसने वैसे ही यीशु पर आक्रमण किया जैसे वह हमारे मन में आकर हमें पापपूर्ण सुझाव देकर प्राय: हम पर आक्रमण करके सफल हो जाता है। हम जानते हैं कि यीशु पर आने वाली परीक्षा तीन प्रकार से हुई:

क. शारीरिक भूख के द्वारा। –''कह दे, कि ये पत्थर रोटियां बन जाएं''[7] यह परीक्षा (1) उसे अपने पिता द्वारा की जाने वाली देखभाल पर भरोसा न करने, (2) आश्चर्यकर्म करने की अपनी सामर्थ का इस्तेमाल अपने लिए करने के लिए थी। लेकिन यीशु ''इसलिए नहीं आया कि उसकी सेवा टहल की जाए, परन्तु इसलिए आया कि आप सेवा टहल करे,''[8] उसने अपने अलौकिक दानों का आरज़्भ स्वार्थी उद्देश्यों को पूरा करके नहीं करना था।

ख. परमेश्वर में उसके भरोसे के द्वारा। –मन्दिर के कंगूरे से ''अपने आप को नीचे गिरा दे।''[9] परन्तु जो परमेश्वर पर अविश्वास नहीं करता था उसने लोगों को चकित करने के लिए ऐसे सज़्भाल नहीं करवानी थी।

ग. राज्य के लिए उसकी योजनाओं के द्वारा। –यीशु ही मसीह है, उसी ने पूरे संसार पर राज्य करना है। ''तू गिरकर मुझे प्रणाम कर।''[10] आत्मिक हथियारों से धीरे–धीरे विजय पाने की प्रतीक्षा न कर। सांसारिक हथियारों का इस्तेमाल कर। अपने आप को अपने लोगों की सांसारिक आशाओं के साथ मिला ले। ऐसा कौन सा मुकुट है जिस पर तू विजय नहीं पा सकता? तलवार निकालने पर मुहज़्मद पर भी यही परीक्षा पड़ी थी, और कलीसिया के फिर से बहाल होने के समय भी यही परीक्षा होती है।

यीशु ने विजय पा ली थी, और परीक्षा लेने वाला ''कुछ समय के लिए उसके पास से चला गया,''[11] ताकि उससे इर्ष्या करने वाले ग्रन्थियों, यहूदा और महासभा के षड्यन्त्रों से

वह घृणा बढ़ाए जिसने उसे क्रूस तक पहुंचाया। परन्तु दृढ़ संकल्प यीशु ''सब बातों में हमारी नाईं परखा तो गया तौभी निष्पाप निकला'' (इब्रा. 4:15) और उसके विरुद्ध कोई हथियार काम न आ सका ।

पाद टिप्पणियां

[1]लूका 2:49. [2]लूका 2:52. [3]मज़ी 3:2; 4:17; मरकुस 1:14ख, 15 भी देखिए। [4]मज़ी 3:14. [5]मज़ी 3:17. [6]गीकी की पुस्तक ''लाइफ ऑफ़ क्राइस्ट,'' अंक 1, पृ. 413. [7]मज़ी 4:3; लूका 4:3. [8]मज़ी 20:28; मरकुस 10:45. [9]मज़ी 4:6; लूका 4:9. [10]मज़ी 4:9; लूका 4:7. [11]लूका 4:13; मज़ी 4:11 भी देखें।